अध्याय 11

प्रमुख सांस्कृतिक प्रवृत्तियाँ

हम पढ़ेंगे

11.1 सांस्कृतिक प्रवृत्तियों से आशय एवं प्रमुख सांस्कृतिक प्रवृत्तियाँ ।

11.2 प्राचीन काल से राजपूत काल तक की सांस्कृतिक प्रवृत्तियाँ- साहित्य, चित्रकला, वास्तुकला, मूर्तिकला, नृत्य एवं संगीत, ललित कलाएँ।

11.3 सल्तनत काल से मुगल काल तक की सांस्कृतिक प्रवृत्तियाँ- साहित्य, चित्रकला, वास्तुकला, मूर्तिकला, नृत्य एवं संगीत कला, ललित कलाएँ।

11.1 सांस्कृतिक प्रवृत्तियों से आशय एवं प्रमुख सांस्कृतिक प्रवृत्तियाँ

सांस्कृतिक प्रवृत्तियाँ हमें प्राचीन ऐतिहासिक धरोहर से परिचित कराती है। किसी भी देश का इतिहास तभी महत्वपूर्ण होता है जब उसके सांस्कृतिक प्रतिमानों का अध्ययन वैज्ञानिक आधार पर किया जाये। भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक है। भारत प्राचीनकाल से विश्व भर में अपनी समृद्ध संस्कृति के लिये जाना जाता रहा है। इसकी प्रमुख विशेषता निरंतरता के साथ पुरातनता, अध्यात्मवाद, एकीकरण व समन्वय की शक्ति इत्यादि है।

भारतीय संस्कृति मानव समाज की अमूल्य निधि है। संस्कृति शब्द का अर्थ अपने आप में बहुत व्यापक है। प्रत्येक सभ्यता के क्रमिक विकास में एक स्तर आता है, जब वह विशेष मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक आदर्शों का निर्माण कर लेता है। यह मनुष्य के सामूहिक जीवन में इस प्रकार से घुल-मिल जाते हैं कि समस्त समाज उदात्त और सूक्ष्म विशेषताओं में रंग जाता है। सभ्यता के सूक्ष्म उदात्त तत्वों के रचनात्मक विकास और पल्लवन का नाम संस्कृति है। सत्य की खोज सौन्दर्य की अभिव्यक्ति और मानव प्रेम का विकास संस्कृति के प्रमुख तत्व हैं। सभ्यता का विशेष चित्रण आसान होता है परन्तु संस्कृति विशेष का वास्तविक बोध और विवेचन उत्तम प्रयास, निष्पक्ष अनुसंधान और सूक्ष्म चिन्तन द्वारा ही सम्भव है। संक्षेप में कह सकते हैं कि सभ्यता शरीर है तो संस्कृति अनुक्रमाणिक आत्मा है।

11.2 प्राचीन काल से राजपूत काल तक की सांस्कृतिक प्रवृत्तियाँ

तत्कालीन सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक जीवन को हम उस समय के साहित्य, चित्रकला, वास्तुकला, मूर्तिकला, नृत्य एवं संगीत एवं अन्य ललित कलाओं के माध्यम से समझ सकते हैं। सांस्कृतिक प्रवृतियों से आशय यहां भारतीय संस्कृति के स्वरूप से है जिसमें साहित्य, चित्रकला, वास्तुकला, मूर्तिकला, नृत्य एवं संगीत एवं अन्य ललित कलाएं शामिल हैं। इस अध्याय में हम इनका क्रमबद्ध अध्ययन करेंगे।

साहित्य- साहित्य समाज का दर्पण माना जाता है। भारत का इतिहास जितना गौरवशाली है, उतना ही साहित्य समृद्धशाली है। साहित्य लिखित साक्ष्य है। भारतीय साहित्य के केन्द्र में संस्कृत साहित्य का अक्षय भण्डार है।

सिन्धु सभ्यता में लिपि का ज्ञान था। इसके अनेक प्रमाण मिलते है, हालांकि यह लिपि आज भी विद्वानों के लिये एक रहस्य है, फिर भी कुछ विद्वानों ने इसे पढ़ने का दावा किया है। यहां अब तक लगभग 2500 से अधिक अभिलेख प्राप्त हैं। सबसे लम्बे अभिलेख में 17 अक्षर

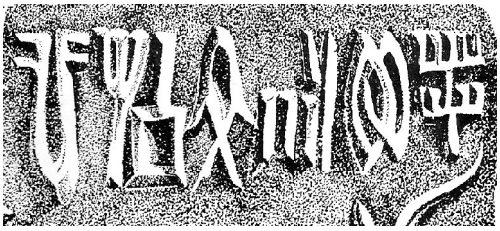

सिन्धु लिपि

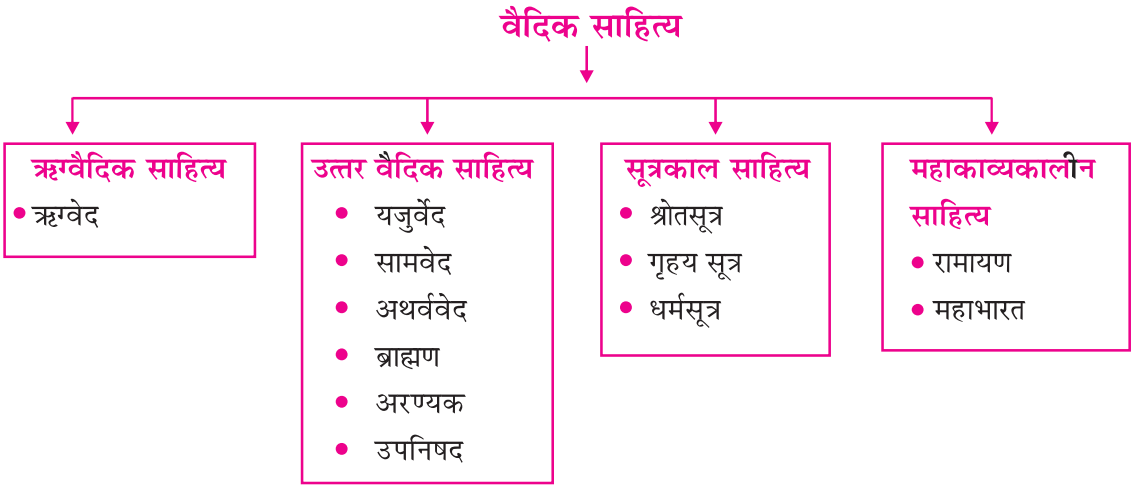

है। सिन्धु लिपि भावचित्रात्मक लगती है, साथ ही इसके अक्षरसूचक होने की संभावना अधिक है। लिपि का विकास सिन्धु निवासियों में साहित्यक अभिरूचि को इंगित करता है।

वैदिक काल साहित्य सृजन की दृष्टि से समृद्ध है। इस काल के साहित्यों में प्राचीन जीवन मूल्यों का सजीव वर्णन किया गया है। वैदिक साहित्य में वेद, ब्राह्मण ग्रंथ, अरण्यक, उपनिषद, वेदांग, सूत्र, महाकाव्य, स्मृतिग्रंथ, पुराण आदि आते हैं। वेदों की संख्या चार है- ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद। वैदिक साहित्य का सबसे प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद है।

महाकाव्यकालीन समय में रामायण एवं महाभारत जैसे ग्रंथों की रचना की गई जिसमें उस समय के सामाजिक एवं राजनीतिक चित्रण मिलता है। रामायण की रचना महर्षि वाल्मिकी द्वारा एवं महाभारत की रचना महर्षि वेद व्यास ने की थी।

जैन साहित्य की तीन शाखाएँ हैं- धार्मिक ग्रंथ, दर्शन और धर्म निरपेक्ष लेखन। इनमें मुख्यत: काव्य, दन्त कथाएँ, व्याकरण एवं नाटक हैं। इनमें से अधिकतर रचनाएँ अभी तक पाण्डुलिपि के रूप में है और गुजरात तथा राजस्थान के चैत्यों में मिलती है। रचनाएं है- अंग, पंग, प्रकीर्ण, छेद, सूत्र और मलसूत्र। अंतिम चरण में आख्यान एवं दन्तकथाएं लिखने के लिए उन्होंने प्राकृत के स्थान पर संस्कृत भाषा का प्रयोग किया। व्याकरण और काव्य शास्त्र पर उनके कार्य से संस्कृत की वृद्धि में काफी योगदान हुआ। जैन साहित्य में भद्रबाहु का कल्पसूत्र, हेमचन्द्र का परिशिष्ट पर्वन प्रमुख ग्रन्थ है।

बौद्ध धर्म ने पाली और संस्कृत भाषाओं को अत्यधिक समृद्ध किया है। बौद्ध धर्म में त्रिपटिकाएं यानि तीन टोकरियां- विनयपिटक, सूतपिटक और अभिधम्मपिटक है। विनयपिटक में दैनिक जीवन के नियम व उपनियम हैं। सूतपिटक में नैतिकता और चार महासत्यों पर बुद्ध के संवाद और संभाषण संग्रहित हैं। अभिधम्मपिटक में दर्शन और तत्व संग्रहित हैं। बौद्ध साहित्य में दीपवंश, महावंश, दिव्यावदान, मिलिन्द पन्हों, महाबोधि वंश, महावंश टीका, आर्य मंजूश्रीमूलकल्प आदि शामिल हैं।

मौर्यकालीन साहित्य के पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध है। अशोक के अभिलेखों से विदित होता है कि इस काल में दो प्रकार की लिपियाँ प्रयोग में लायी जाती थी। बाह्मी एवं खरोष्ठि लिपि। इस काल में कौटिल्य ने महान ग्रन्थ अर्थशास्त्र की रचना की। इसी समय तृतीय बौद्ध संगीति ने त्रिपिटकों का संगठन तथा अभिधम्मपिटक के कथावस्तु की रचना की। अनेक विद्वानों का मत है कि जैन धर्म के आचारसूत्र, भगवती सूत्र आदि की अधिकाशत: रचना इसी समय हुई।

शुंग सातवाहन के काल में पतंजली जैसे विद्वान हुए, इन्होंने पाणिनी की अष्टध्यायी पर महाभाष्य लिखा व संस्कृत भाषा के नियमों को संशोधित रूप में प्रस्तुत किया। कालिदास के 'मालविकाग्निमित्रम्' में पुष्यमित्र शुंग के अश्वमेद्य यज्ञ

साहित्यकार	–	साहित्य
हरिषेण	–	प्रयाग प्रशस्ति लेख
कालिदास	–	अभिज्ञान शकुन्तलम,मालविकाग्रिमित्र, मेघदूत विक्रमोर्वशीयम, कुमारसम्भव, रघुवंश, ऋतुसंहार,
विशाखदत्त	–	मुद्राराक्षस, देवी चन्द्रगुप्तम्
शुद्रक	–	मृच्छकटिकम्
वज्जिका	–	कौमुदी महोत्सव
विष्णु शर्मा	–	पंचतंत्र
आर्यभट्ट	–	आर्य भटीयम्
वराहमिहिर	–	वृहत्संहिता

एवं विदर्भ राज के साथ अग्निमित्र की लड़ाई का वर्णन है। प्रसिद्ध आयुर्वेदिक ग्रन्थ 'चरक संहिता' इसी काल में लिखा गया। बौद्ध ग्रन्थ 'मिलिन्द के प्रश्न' की रचना इसी काल में नागसेन ने की थी।

गुप्तकाल साहित्य का स्वर्णयुग था। गुप्त शासकों ने संस्कृत को राष्ट्रभाषा के रूप में गौरावान्वित किया। गुप्त शासकों के शासन काल में साहित्य जिस रूप में पुष्पित-फलित हुआ वह अद्वितीय है। इस काल में ज्ञान-विज्ञान की अनेक विधाओं में साहित्य सृजन किया गया। स्मृति साहित्य का सृजन इसी काल में किया गया। याज्ञवल्क्य स्मृति, नारदस्मृति, कात्यायन स्मृति आदि प्रमुख हैं। रामायण तथा महाभारत को गुप्तकाल में लिपिबद्ध किया गया। बौद्ध दार्शनिक असंग ने **महायानसूत्रानंकार** व योगाचार भूमिशास्त्र, वसुबंध ने **अभिधर्म** कोष की रचना की। जैन लेखकों में जिनचन्द्र, सिद्धसेन, देवनन्दिन आदि प्रमुख है। गुप्तकालीन साहित्य को देखकर प्रतीत होता है कि उस समय में प्रचलित शिक्षा पद्धति उत्तम रही होगी। नालन्दा विश्वविद्यालय की स्थापना इसी काल में हुई थी। काशी, मथुरा, अयोध्या, पाटलीपुत्र प्रमुख शिक्षा के केन्द्र थे।

साहित्यकार		साहित्य
भारवि	–	किरातार्जुनीय
माघ	–	शिशुपाल वध
कल्हण	–	राजतंरगिणी
विल्हण	–	विक्रमांक चरित्र
परिमल	–	नवसाहसांक चरित्र
बल्लाल	–	भोज प्रबंन्ध

शून्य के सिद्धांत का प्रारम्भ और दशमलव प्रणाली के विकास का श्रेय गुप्त युग के गणितज्ञों को है, जिसमें वराहमिहिर द्वारा स्थापित कापित्था के स्कूल (वर्तमान कायथा उज्जैन) की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

हर्षवर्धन विद्वानों का सम्मान करता था। बाणभट्ट उस काल के महान लेखक थे जिन्होंने दो महान ग्रन्थों की रचना की- हर्ष चरित्र, कादम्बरी। स्वयं हर्ष ने संस्कृत के तीन नाटक लिखे-नागानन्द, रत्नावली, प्रियदर्शिका। संस्कृत साहित्य में इनका महत्व है हर्ष के दरबार में बाण के अतिरिक्त मयूर, हरिदत्त, जयसेन, मातंग दिवाकर आदि प्रख्यात लेखक व कवि थे।

राजपूत काल में साहित्य के सृजन का कार्य उन्नति की ओर अग्रसर था। साहित्य श्रृंगार प्रधान और अतिशय अलंकारिक हो गया। राजपूत नरेश उच्चकोटि के विद्वान थे। राजा मुंज, भोज, अमोघवर्ष आदि प्रमुख थे। राजा भोज की विद्वता तथा काव्य प्रतिभा लोक विख्यात थी। इस समय चिकित्सा, ज्योतिष, व्याकरण, वास्तुकला, आदि विविध विषयों पर ग्रन्थ लिखे गये।

उत्तर भारत के साथ-साथ **दक्षिण भारत** में भी उल्लेखनीय साहित्य सृजन किया गया। पुलकेशिन द्वितीय के सामन्त ने 'शब्दावतार' नामक ग्रन्थ की रचना की। विद्वान उदयदेव ने 'जैनेन्द्र व्याकरण' ग्रन्थ लिखा। पल्लवों के शासनकाल में दक्षिण भारत के संस्कृत साहित्य का विशेष योगदान है। 'किरातर्जुनीयम' महाकाव्य के रचियता त्रावणकोर निवासी महाकवि भारवि थे। महेन्द्र वर्मन प्रथम ने 'मतविलास प्रहसन' नामक ग्रन्थ की रचना की। पल्लवों एवं चोल शासकों के शासनकाल में तमिल भाषा का भी विकास हुआ। चोल काल प्रसिद्ध तमिल लेखक जयगोन्दार थे। जिन्होंने 'कलिगतुप्परणि' की रचना की। कम्बन नामक कवि ने तमिल 'रामायण' की रचना की। इस काल के उल्लेखनीय ग्रन्थ है- शेक्किलार द्वारा रचित

पेरियपुराणम्। रामानुज के प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं- श्रीभाष्य, वेदार्थ-संग्रह, वेदान्तदीप आदि। कांची विद्या अध्ययन का प्रमुख केन्द्र था। जहाँ दूर-दूर से लोग शिक्षा ग्रहण करने आते थे।

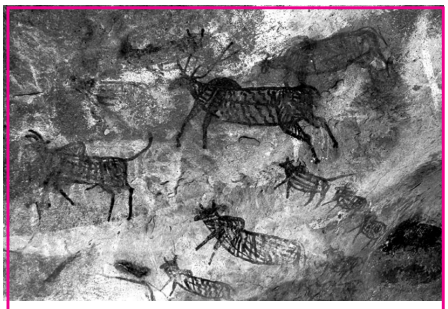

भीमबैठका का एक शैलचित्र

चित्रकला- चित्रकला का विकास मानव के विचारों की अभिव्यक्ति के चित्रात्मक स्वरूप पर आधारित है। भारतीय चित्रकला की समृद्ध परम्परा भारतीय दृष्टि की रंग के प्रति संवेदनशीलता की परिचायक है। विभिन्न कालों में चित्रकला का अंकन तत्कालीन समाज के चित्रकारों द्वारा किया गया है। भारत में प्रागैतिहासिक काल से मानव की दृश्य अभिव्यक्ति को पाषाण खण्डों में देखा जा सकता है। भोपाल के निकट **भीमबेटिका** शैलाश्रय में इस काल के उत्कृष्ट उदाहरण देखे जा सकते है।

सिन्धु सभ्यता के निवासियों को चित्रकला का भी ज्ञान था। इसके पर्याप्त प्रमाण मिलते है। यहाँ से प्राप्त बर्तनों एवं मोहरों पर अनेक चित्र मिलते है। भवनों की दीवारों पर भी चित्रकारी की जाती थी चित्रों में प्राकृतिक दृश्य एवं जीव जन्तु दोनों के उदाहरण मिलते है। चित्रों में रंगों का प्रयोग भी किया जाता था।

सिन्धु सभ्यता के चित्रित पात्रों के नमूने

वैदिक कालीन साहित्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ये लोग मन की अभिव्यक्ति को दीवारों के साथ-साथ बर्तनों तथा कपड़ों पर कढ़ाई के रूप में अंकित करते थे।

मौर्य कालीन चित्रकला का विकास लोककला के रूप में हुआ। मौर्यकालीन भवनों एवं प्रासादों के स्तम्भों पर चित्रकारी की जाती थी। अजन्ता की गुफाओं के कुछ चित्र ई.पू. प्रथम शताब्दी के है। यहाँ स्थित गुफा संख्या -10 में छद्दत जातक का चित्रांकन विशेष उल्लेखनीय है।

अजन्ता गुफा की चित्रकला की एक कृति

गुप्तकाल में चित्रकला वैज्ञानिक सिद्धांतों पर आधारित थी। चित्रकला के सर्वोकृष्ट उदाहरण अजन्ता की गुफाओं के चित्र है। इसे विश्व धरोहर के रूप में शामिल किया गया है। ये चित्र मुख्यत: धार्मिक विषयों पर आधारित है। इसमें बुद्ध और बोधसत्व के चित्र है। जातक ग्रन्थों के वर्णनात्मक दृश्य है। यह चित्र वास्तविक, सजीव तथा प्रभावोत्पादक है। इस काल की चित्रकला बाघ (म.प्र. में धार जिले में) की गुफाओं में भी देखी जा सकती है। इन गुफाओं के चित्रों के विषय लौकिक है। इस काल में चित्रकारी में सुन्दर रंगों का प्रयोग किया गया है।

हर्ष के काल में वस्त्रों पर चित्र बनाए जाते थे। विवाह महोत्सव में निपुण चित्रकारों को बुलाये जाने का उल्लेख मिलता है। इन चित्रकारों ने मांगलिक दृश्यों का अंकन किया। महिलाएँ ऐसे अवसर पर कच्ची मिट्टी के बर्तनों को अलंकृत किया।

राजपूत काल में चित्रकला पूर्ण विकसित स्वरूप में आ चुकी थी। इस काल में चित्रकला की अनेक क्षेत्रीय शैलिया विकसित हो चुकी थी जैसे गुजरात शैली, राजपूताना शैली। गुजरात शैली में जैन जीवन पद्धति एवं धर्म से सम्बन्धित चित्र है। राजपूताना शैली में राधाकृष्ण की रास लीला व नायक नायिका के भेद सम्बन्धित चित्र है। मंदिरों और राजमहलों को

सजाने के लिये भित्ति चित्र बनाए जाते थे। लघु चित्रों को बनाने की कला भी इसी काल से प्रारंभ हुई। पुस्तकों को आकर्षक बनाने के लिये यह चित्र बनाये जाते थे।

वास्तुकला – वास्तु कला मानव जीवन के रीति-रिवाजों और तत्कालीन समय की सभ्यता व समाज व्यवस्था पर प्रकाश डालती है। किसी भी युग के इतिहास का अनुमान उस युग की निर्मित इमारतों से लगाया जा सकता है। वास्तु शिल्प तत्कालीन समय के सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक व सांस्कृतिक इतिहास को प्रकाशित करने में समर्थ है।

सिन्धु घाटी के मोहन जोदड़ो व हड़प्पा नगर की खुदाई से तत्कालीन वास्तु शिल्प की जानकारी मिलती है। इस काल में लोग भवन निर्माण कला में दक्ष थे । विशाल अन्नागार, मकान सुनियोजित नगर, बड़े प्रसाद, बन्दरगाह स्नानागार आदि तत्कालीन वास्तुशिल्प पर पर्याप्त प्रकाश डालते हैं। तत्कालीन अवशेषों को देखकर किसी आधुनिक विकसित नगर से तुलना की जा सकती है। पक्की ढकी हुई नालियाँ, भवनों के खिड़की -दरवाजे, मुख्य मार्ग से विपरीत बनाना, भवनों में रसोई घर, स्नानागार, रोशनदान की पर्याप्त व्यवस्था, साधारण व राजकीय भवनों का निर्माण आदि तत्कालीन वास्तु शिल्प के अनुपम उदाहरण है। सिन्धु सभ्यता के नगर भारत में प्रथम नगरीकरण के प्रमाण है।

वैदिक काल में वास्तु शिल्प का ज्ञान था। ऋग्वेद सहित अन्य ग्रन्थों में जीवन के विभिन्न पक्षों का उल्लेख किया गया है। इन्हीं में यज्ञवेदियों, हवनकुण्डों, यज्ञ शालाओं, पाषण प्रसादों, खम्बों व द्वारा वाले भवनों, आश्रमों आदि का उल्लेख मिलता है। वैदिक काल एवं महाकाव्य काल में बड़े-बड़े राजप्रसादों व भवनों का उल्लेख मिलता है जिसका वास्तु शिल्प अद्‌भुत है।

मौर्यकाल के वास्तुशिल्पों में पाटलिपुत्र स्थित राजप्रसाद गया में बाराबर तथा नागार्जुनी पहाड़ियों को काटकर तैयार किये गए चैत्य गृह-आवास अशोक का स्तम्भ, अशोक द्वारा निर्मित बौद्ध स्तूप, चैत्यगृह एवं बिहार आदि प्रमुख है। इस काल में निर्मित गुहाओं की दीवारों व छतों पर अत्यन्त चमकदार पॉलिश मौयकालीन कला की विशिष्टता को परिलक्षित करता है। इस काल में ही अशोक द्वारा चौरासी हजार स्तूपों का निर्माण करवाने का उल्लेख मिलता है। सारनाथ, बोध गया, सॉची के स्तूप प्रसिद्ध हैं।

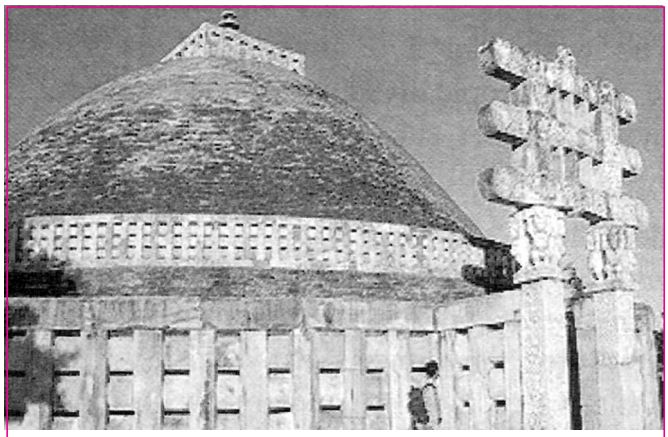

सांची का स्तूप

मौर्य वास्तुकला के सर्वोत्तम नमूने अशोक के स्तम्भ है जो कि उसने धम्म के प्रचार हेतु बनवाये थे। ये स्तम्भ संख्या में लगभग 20 हैं तथा देश के विभिन्न भागों में स्थित है। उत्तर प्रदेश में सारनाथ, प्रयाग, कौशाम्बी, नेपाल की तराई में लुम्बिनी व निग्लिवा में अशोक के स्तम्भ मिले है। इन स्थानों के अतिरिक्त साँची, लोरिया नन्दगढ़ आदि स्थानों में भी अशोक के स्तम्भ मिले हैं। स्तम्भों में शीर्ष अत्यधिक कलापूर्ण बनाये जाते थे।

- **अभिलेख**-समकालीन प्रशासन, युद्ध एवं जनजीवन से संबन्धित जानकारी का लिखित विवरण। ये पत्थरों, स्तम्भों, गुहाओं, शिलाओं आदि पर लिखी जानकारियाँ होती हैं।
- **स्तूप**- उल्टे कटोरे के आकारनुमा पत्थर अथवा ईटों से निर्मित ठोस गुम्बद, महात्मा बुद्ध व बौद्ध भिक्षुओं के अवशेषों को सुरक्षित रखने के उद्‌देश्य से बनाये गये थे।
- **चैत्य**- सामूहिक पूजा के मंदिर।
- **विहार**- भिक्षुओं के रहने के मठ।
- **गुफा** - चट्टानों को काटकर बनायी गई गुफाएँ ।

मौर्य कालीन स्थापत्य कला के

प्रसिद्ध **स्तम्भ लेख** साँची (म.प्र.), सारनाथ (उ.प्र.)। **गुहालेख** बाराबर, नार्गार्जुनी (बिहार)। **स्तूप,** साँची (म.प्र.), बोधगया (बिहार) में हैं।

शुंग तथा सातवाहन काल में मौर्य काल की तुलना में परिवर्तन आया। मौर्य काल में भवनों और स्तूपों में मुख्यत- लकड़ी तथा कच्ची ईंटों का प्रयोग होता था। इस काल में पत्थरों का उपयोग होना आरंभ हो गया।

गुप्त काल में वास्तुकला चरमोत्कर्ष पर थी, जिसके उदाहरण देखने को मिलते है। इस काल की विशेष उपलब्धि मंदिर निर्माण के संदर्भ में रही है। मंदिर ईट तथा पत्थरों आदि से बनाये जाते है। गुप्तकाल में बने मंदिरों की छतें सपाट थी सबसे पहले देवगढ़ (झांसी उ.प्र.) के दशावतार मंदिर में शिखर का निर्माण हुआ था, इसके बाद ही मंदिरों में शिखर बनने लगे। इनमें से अनेक मंदिर आज भी अवस्थित है जैसे - म.प्र. में रायसेन जिले में साँची का मंदिर, उत्तरप्रदेश में भीतरगांव (महाराष्ट्र) तथा देवगढ़ के मंदिर इसके उदाहरण हैं। अजन्ता की 16,17,19 नम्बर की गुफा गुप्तकालीन मानी जाती है। उदयगिरि (विदिशा म.प्र.), बाघ (धार म.प्र.) आदि गुफाओं का निर्माण गुप्त काल में हुआ था। गुप्तकाल के शिल्पकार लोहे तथा कांसे का काम करने में कुशल थे। नई दिल्ली में महरोली में स्थित लोह स्तम्भ लोह प्रोद्यौगिकी का एक अद्‌भुत उदाहरण है। इसे ईसा की चौथी शताब्दी में बनाया गया था और आज तक जंग नहीं लगा।

हर्ष के समय में स्थापत्य कला अपने प्रवाह में थी। हर्ष ने कनौज में आयोजित सभा के लिये भवनों का निर्माण करवाया था जिसमें दो विशाल कमरों में से प्रत्येक में एक-एक हजार व्यक्ति बैठ सकते थे। इसके अतिरिक्त इस काल में भवन निर्माण, स्तूप एवं विहारों का निर्माण करवाया गया जो तत्कालीन वास्तु शिल्प के सन्दर्भ में प्रकाश डालते थे।

पूर्व मध्यकाल में शासक अपने वैभव को प्रदर्शित करने के लिए विशाल मंदिरों का निर्माण करवाते थे। अत: इस काल की स्थापत्य कला मंदिरों में देखी जा सकती है। इस काल में बने मंदिरों में खजुराहों का मंदिर समूह जिन्हें चन्देल शासकों द्वारा बनवाया गया था। यहाँ लगभग 30 मंदिर है। जोधपुर के समीप ओसिया में बाह्मण तथा जैन मंदिर, चित्तौड़गढ़

राजपूत कालीन मुख्य मंदिर

नाम	स्थान
कन्दरिया महादेव	खजुराहो
दिलवाड़ा मंदिर	माउण्ट आबू
लिंगराज मंदिर	भुवनेश्वर
मुक्तेश्वर मंदिर	भुवनेश्वर
सूर्य मंदिर	कोणार्क
महाबलिपुरम	तामिलनाडु
वृहदीश्वर मंदिर	तंजोर

कंदरिया महादेव मंदिर

में स्थित कालिका देवी का मंदिर दर्शनीय है। आबू में स्थित जैन मंदिर आदि इस काल के उत्कृष्ट उदाहरण है।

उत्तर भारत के अलावा दक्षिण भारत व पूर्वी भारत में भी अनेक मंदिरों का निर्माण हुआ। इस काल में बने मंदिरों को

नागर शैली का मंदिर

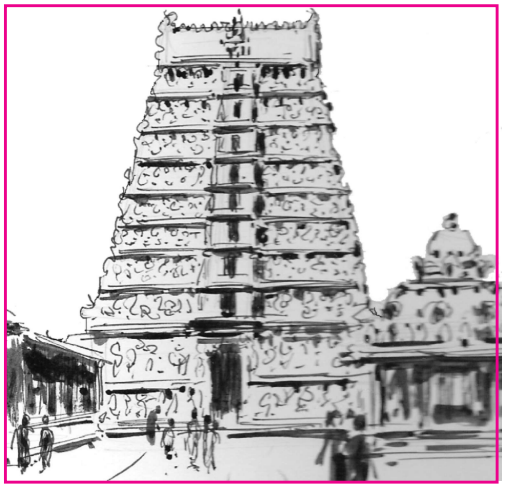

द्राविड़ शैली का मंदिर

मुख्यत: दो शैलियों में विभाजित किया जाता है - नागर शैली व द्राविड़ शैली।

नागर शैली के मंदिर प्रमुखतया उत्तरी भारत में और द्राविड़ शैली के मंदिर दक्षिण भारत में हैं। नागर और द्राविड़ शैली के मंदिरों का अन्तर मंदिरों के शिखरों में दिखाई देता है। नागर शैली में शिखर लगभग वक्राकार होता है। इसके शीर्ष पर गोलाकार आमलक और कलश पाया जाता है। द्राविड़ शैली के मंदिरों के शिखर आयताकार एक-दूसरे पर रखे हुए आयताकार खण्डों की सहायता से बनते हैं।

मूर्तिशिल्प - कला के सन्दर्भ में भारतीय परम्परा में 'शिल्प' शब्द का प्रयोग किया गया है। शिल्प हस्तकौशल है और बुद्धि-विलास है, जो मूर्तियों के रूप में प्राप्त हैं।

सिन्धु सभ्यता में पाषण मूर्तियाँ बहुत कम संख्या में मिलती है। इसके पीछे कारण शायद यही रहा होगा कि इस सभ्यता के आस-पास के क्षेत्रों में अपेक्षाकृत पत्थर का अभाव था। इस समय पक्की मिट्टी की मूर्तियाँ, चूना-पत्थर सेलखड़ी, बलुआ पत्थर और सलेटी पत्थर से निर्मित हैं।

इस काल में धातु मूर्तियों का चलन शुरू हो चुका था। मोहन जोदड़ो से एक नर्तकी की कांस्य मूर्ति मिली है। इसी सभ्यता का एक कांस्य रथ मूर्ति के रूप में मिला है। दो पहिए वाले रथ को दो बैल खींच रहे हैं। एक व्यक्ति इस रथ को संचालित कर रहा है। इसी समय की अन्य मूर्तियों में हाथी, गेंडा, भैंस की मूर्तियों में कूबडदार बैल यहाँ की मुहरों में पर सर्वाधिक प्राप्त हैं। अन्य पशु-मूर्तियों में कुत्ता, भेड़, सूअर, बंदर और अन्य पशु-पक्षियों का अंकन मोहरों पर मिलता है। सिन्धु सभ्यता में नारी की मृणमूर्तियाँ बहुतायत में मिलती हैं। सिन्धु सभ्यता की मोहरे वर्गाकार आयताकार व बटन के आकार की हैं। ये गोमेद, चर्ट और मिट्टी की हैं।

नर्तकी की कांस्य की मूर्ति

लोथल के देसलपुर से ताँबे की मोहर भी मिली है। इसमें एक चौकी पर पशुपति शिव आसीन है जिनके आस-पास हाथी, चीता, गेंड़ा, भैंस आदि का अंकन मिलता है।

मौर्यकाल में मूर्तिकला का विकास हुआ मौर्यकालीन मूर्तिशिल्प में पशुमूर्तियाँ स्तम्भ आदि पर ईरानी प्रभाव दिखाई देता है। कुछ विद्वान इस पर भारतीय प्रभाव को स्पष्ट करते हैं। अशोक स्तम्भ उसके शीर्ष पर उत्कीर्णित पशु मूर्तियाँ व वानस्पतिक अलंकरण प्रस्तर व मृणमूर्तियाँ इस काल के मूर्तिशिल्प को इंगित करते हैं। पाषाण मूर्तियाँ पाटिलपुत्र, मथुरा, विदिशा और अन्य क्षेत्र से प्राप्त हैं। इन पर मौर्यकालीन विशिष्ट चमकदार पालिश मिलती है। इस काल की मूर्तियों में यक्ष-यक्षिणियों की मूर्तियाँ सर्वाधिक सजीव व सुन्दर है।

प्रथम शताब्दी ईसवी में मूर्तिकला के क्षेत्र में एक नवीन युग का सूत्रपात हुआ। कुषाण काल में मथुरा और गांधार शैलियों में निर्मित बौद्ध प्रतिमाओं का उल्लेख मिलता है। इस समय पहाड़ों की गुफाओं में विभिन्न देवी-देवताओं, यक्ष, नाग, शार्दूल आदि के अंकन मिलते हैं। इसी क्रम में बेसनगर विदिशा से हेलियोडोरस का गरूड़-स्तम्भ शुंग कला का अनुपम उदाहरण है। गांधार शैली पुष्कलरावती, तक्षशिला, पुरूषपुर (पेशावर) के आस-पास विकसित हुई जबकि मथुरा शैली राजस्थान व उत्तर प्रदेश के क्षेत्रों में विकसित हुई। कुषाण शासकों के सिक्कों पर भी मूर्तिशिल्प का अंकन यूनानी प्रभाव में दिखाई देता है।

शुंग तथा सातवाहनों ने साँची, भरहुत स्तूपों के नवीनीकरण के समय तोरण द्वार और स्तम्भों की चौकियों पर सजीवता से मूर्तियाँ बनवायी, जो उनकी उत्कृष्ट मूर्तिकला की जानकारी देती है।

कुषाण काल में मूर्ति कला के दो प्रमुख केन्द्रों का विकास हुआ। गान्धार शैली और मथुरा शैली।

गान्धार शैली की विशेषताएँ -

- गान्धार शैली के विषय भारतीय एवं तकनीकी यूनानी है।
- मूर्तियाँ प्रायः स्लेटी पत्थर से निर्मित है।
- मूर्तियों में सिलवटदार वस्त्र दिखाये है
- महात्मा बुद्ध को सिंहासन पर बैठे भी दिखाया गया है।

मथुरा शैली की विशेषताएँ -

- मथुरा में बौद्ध, जैन तथा ब्राह्मण तीनों धर्मो की मूर्तियों के अवशेष मिलते है।
- मथुरा कला के अन्तर्गत भगवान बुद्ध तथा बोधिसत्वों की मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं।
- बुद्ध की मूर्तियां ऊर्ध्ववस्त्र भी धारण किये है।
- मूर्तियों का निर्माण बलुआ पत्थर से किया गया है।

गुप्तकाल ने मूर्तिकला के क्षेत्र में और ऊचाईयाँ प्राप्त की। इस काल में मूर्तियों का अंकन पूर्णतः भारतीय हो रहा था और यूनानी प्रभाव धीरे-धीरे समाप्त हो रहा था। इस समय मूर्तियों में आध्यात्मिकता आदि अलौकिक सौन्दर्य के भाव प्रकट होने लगे थे। गुप्तकालीन मूर्तियाँ में आकृति, भाव भंगिमा, मुद्रा तथा निखार पर मूर्तिकार ने बल दिया जिससे वे और अधिक सजीव व जीवंत होने लगी थी। गुप्तकालीन मूर्तिशिल्प की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि यह थी कि इस काल में विष्णु की दशावतार

गांधार शैली की बुद्ध प्रतिमा मथुरा शैली की बुद्ध प्रतिमा

प्रतिमाओं व ब्राह्मण धर्म की अन्य प्रतिमाओं का अंकन शुरू हुआ। इस काल में मूर्तिकला अपनी प्रौढता तथा परिष्कृत रूप में विद्यमान थी।

हर्ष काल के समय मूर्तिकला के सन्दर्भ में अलग से कोई विशेष जानकारी नहीं है। उसने बौद्ध धर्म के प्रचार प्रसार हेतु स्तूप व विहारों का निर्माण कराया। तत्कालीन समय में मूर्तिकला अपने सामान्य प्रवाह में थी।

पूर्व मध्यकाल इस समय की बुद्ध व ब्राह्मण धर्म के देवी देवताओं की मूर्तियाँ अपेक्षाकृत अधिक सुन्दर है। इन मूतियों में धर्मगत भाव अधिक प्रकट होते है। राजपूत काल के उत्तरार्द्ध में तांत्रिक विचारधारा का प्रभाव मूर्तियों पर अत्यधिक दिखाई देता है। इस काल में बहुभुजी प्रतिमाओं का चलन शुरू हुआ। इनमें विष्णु की चतुर्भुज मूर्ति एवं देवी मूर्तियाँ प्रसिद्ध हैं। शिव की लिंग मूर्तियाँ बहुतायत में मिलती हैं। उत्तर भारत में तत्कालीन समय में बोधिसत्व की अनेक मूर्तियाँ मिलती हैं। ऐलोरा के कैलाश मंदिर में एक ही पहाड़ को काटकर दो मंजिला मंदिर, मूर्ति कला के परिचायक हैं। पूर्व मध्यकाल की विदिशा के ग्यारसपुर से प्राप्त 10 वीं 11वीं शताब्दी की शात मंजिका मूर्ति अपने श्रृंगार सौष्ठव व भाव प्रधानता के लिए विश्व प्रसिद्ध है। वर्तमान में यह ग्वालियर के गूजरी महल संग्रहालय में संग्रहित है। दक्षिण भारत में भी प्रस्तर व धातु मूर्तिशिल्प के सुन्दर प्रमाण मिलते है। इनमें विभिन्न देवी-देवताओं का अंकन मिलता है। नटराज कांस्य प्रतिमा अपने कलात्मकता के लिए प्रसिद्ध है।

नृत्य संगीत- भारत में नृत्य संगीत की परंपरा अत्यंत प्राचीन है। नृत्य के माध्यम से कलाकार अपनी कला प्रकट करता है। जबकि संगीत का उपयोग मनोरंजन के साथ-साथ धार्मिक एवं सांस्कृतिक अवसरों पर किया जाता रहा है।

सिन्धु सभ्यता में नृत्य-संगीत की परंपरा थी, इसके स्पष्ट प्रमाण भी उपलब्ध हैं। मोहनजोदड़ो से प्राप्त कांस्य नर्तकी प्रतिमा का मिलना इस बात की पुष्टि करता है कि तत्कालीन समय में नृत्यकला मनोरंजन आदि भाव मोहरों पर ढोलक का अंकन मिलता है जो तत्कालीन समय में संगीत के होने का आभास कराता है। इस तरह यह कहा जा सकता है कि सिन्धु सभ्यता संगीत-नृत्य कला लोकप्रिय रही होगी।

वैदिक काल में आर्यों को नृत्य-संगीत बेहद लोकप्रिय था। ऋग्वैदिक काल में संगीत-कला अपने विकसित स्वरूप में दिखाई देती है। गेय व वाद्य संगीत दोनों सुविकसित थे। वाद्यों में आघात, फूंक व तार वाले वाद्य प्रयोग में लाये जाते थे। इनमें-वीणा, दुंदुभि, बांसुरी, श्रृंग, शंख, मृदंग आदि प्रमुख थे। उत्सवों में नृत्य गायन का आयोजन किया जाता था। उत्तर वैदिक काल में भी यह व्यवस्था जारी रही।

मौर्यकाल में भी नृत्य-संगीत मनोरंजन का प्रधान साधन रहा। इस काल में गायक, वादक, नर्तक आदि का उल्लेख मिलता है। मौर्यकाल में नृत्य संगीत की परम्परा की जानकारी मिलती है। यही नहीं मौर्यो के बाद के काल में भी नृत्य-संगीत मनोरंजन का साधन बने रहे।

गुप्तकाल में नृत्य-संगीत विधा बहुत फली फूली। प्रारंभिक कालों की भाँति इस काल में भी नृत्य संगीत लोगों को प्रिय थे। तत्कालीन समय में व संतोत्सव कौमुदी महोत्सव दीपोत्सव आदि पर नृत्य-संगीत का प्रचलन था। तत्कालीन समय में गणिकाओं के होने की भी जानकारी मिलती है जिनका मुख्य कार्य नृत्य गायन ही था। स्वयं गुप्त शासकों ने कलाकारों को प्रश्रय दिया । समुद्रगुप्त स्वयं एक श्रेष्ठ वीणावादक था। अपनी इसी स्मृति को जीवित रखने के लिए उसने वीणाधारी प्रकार के सिक्कों को चलवाया। गुप्तकालीन बाघ की गुफाओं में नृत्य-संगीत का एक महत्व पूर्ण चित्र मिलता है जो तत्कालीन समय में नृत्य-संगीत के वैभव के परिचायक हैं। मालविकाग्निमित्र से ज्ञात होता है कि नगरों में संगीत की शिक्षा के लिए

वीणाधारी समुद्रगुप्त

कला-भवन होते थे। नृत्य की शिक्षा के लिए भी नगरों में आचार्य होते थे। मालविकाग्निमित्र में गणदास को नृत्य-संगीत का आचार्य बताया गया है। इस तरह गुप्तकाल में नृत्य-संगीत के पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं।

हर्ष के समय में भी सामाजिक व्यवस्था के अंतर्गत नृत्य संगीत की परम्परा बनी रही। तत्कालीन समय में भी नृत्य-संगीत आमोद-प्रमोद का साधन था।

पूर्वमध्यकाल में भी नृत्य-संगीत की परम्परा जारी रही। राजपूत राजाओं की सभाओं में नृत्यांगनाएं नृत्य करती थीं और वाद्य बजाये जाते थे।

अन्य ललित कलाएँ-

अन्य ललित कलाओं में नाट्य, रांगोली व वनवासी कलाओं का प्रमुखता से उल्लेख किया जा सकता है। भारतीय परम्पराओं में इनका चलन अत्यंत प्राचीन काल से दिखाई देने लगता है।

सिन्धु सभ्यता में ललित कलाएं प्रचलन में रहीं। सिन्धु सभ्यता के राखीगढ़ी से प्राप्त ऊँचे चबूतरे पर निर्मित अग्निवेदिकाएँ कालीवंगा के फर्श की अलंकृत ईंटें, पक्की मिट्टी की जालियाँ, मूर्तियाँ, अलंकृत आभूषण, बर्तनों पर चमकदार लेप और उन पर वृत, ज्यामितीय रेखाएं व पशु-पक्षियों का अंकन, मंगल चिन्ह स्वास्तिक, चक्र , सूर्य आकृति आदि से तत्कालीन समाज में ललित कलाओं के चलन की जानकारी मिलती है। इसके अतिरिक्त तत्कालीन समय में थियेटर जैसे स्थान की जानकारी भी मिली है जो सम्भवत: नाट्य व नृत्य-संगीत के समय उपयोग में आता होगा।

वैदिक काल में भी ललित कलाओं का उल्लेख मिलता है। इस काल में लौकिक धर्म के विकास के साथ-साथ लोक संस्कृति भी फूली-फली। इस काल में भी मंगल चिन्हों, भवनों की सजावट, जादू कला, यज्ञ वेदिकाओं के उल्लेख मिलते हैं।

मौर्यकाल में लोक कलाएं प्रचलन में रही। इस काल में ऐसे बहुत से लोग थे जो तमाशे दिखाकर जनता का मनोरंजन करते थे। निश्चित रूप से तत्कालीन समय में नट, (मदारी) विविध प्रकार की बोलियाँ बोलकर मनोरंजन करने वाला रस्सी पर नाचने वाला रंगमंच पर अभिनय कर जीवनयापन करने वाला आदि के उल्लेख मिलते हैं।

गुप्तकाल में भी ललित कलाओं का प्रचलन रहा। गुप्तकालीन सिक्कों पर सुन्दर चित्रण इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण हैं। तत्कालीन समय में संस्कृत साहित्य में कई नाटक लिखे गये। इन नाटकों, प्रेमाख्यानों में रोचक प्रसंगों को सजीव किया जाता था। इसके साथ ही काष्ठ शिल्प, पाषाण शिल्प, धातुशिल्प, ताबीज, हाथी दांत शिल्प, आभूषण आदि तत्कालीन ललितकलाओं के परिचायक हैं। इसी क्रम में गुहा मंदिरों में अलंकरण, दीवारों पर चित्रकारी प्रेक्षणिकाएं चमर ढुलाते द्वारपाल, मूर्तियों में केश सज्जा, यक्ष, पशु-पक्षी, नदी, झरनों का अंकन आदि ललित कलाओं के अनुपम उदाहरण हैं। तत्कालीन समय में रंगमंच भी विकसित था। नाट्यशालाओं के लिए प्रेक्षगृह तथा रंगशाला जैसे शब्दों का उल्लेख मिलता है।

हर्षकाल- ललित कलाओं का क्रम हर्ष के काल में भी जारी रहा।

पूर्वमध्यकाल में भी ललित कलाएँ प्रचलन में थी। नट, जादूगर, हाथीदाँत के कारीगर आदि का उल्लेख कला सौन्दर्य के सन्दर्भ में मिलता है। इसी तरह राजपूत कालीन सिक्कों पर सुन्दर अलंकरण मिलते है। मंदिरों की दीवारों पर बनी मूर्तियाँ, राग-रागिनी, नायक-नायिकाओं का चित्रण पादप पत्रों, पुष्पों व पशुओं का भावप्रधान चित्रण, लोक चित्रण आदि महत्वपूर्ण

है इसके अतिरिक्त पूर्व मध्यकाल में विभिन्न ऐतिहासिक व पौराणिक नृत्य-नाटिकाएँ भी तत्कालीन ललित कलाओं में अपना महत्वूपर्ण स्थान रखती हैं।

11.3 सल्तनत काल से मुगल काल की सांस्कृतिक प्रवृत्तियाँ

मध्यकाल में साहित्य का विकास क्रम चलता रहा। इस समय का साहित्य सल्तनत एवं मुगल कालीन व्यवस्थाओं पर पर्याप्त प्रकाश डालता है। तत्कालीन समय में व्यक्तिवादी इतिहास लेखन प्रारंभ हो चुका था।

सल्तनत काल में धार्मिक एवं धर्मनिरपेक्ष साहित्य का सृजन हुआ था। अमीर खुसरो द्वारा रचित दोहे एवं पहेलिया वर्तमान में भी लोकप्रिय हैं। संस्कृत साहित्य को हिन्दू शासकों (विजयनगर, वारंगल, गुजरात) का संरक्षण प्राप्त था। तुर्क सुल्तान फारसी साहित्य में रूचि रखते थे।

लेखक	रचनाएँ
बाबर	तुजुक-ए-बाबरी (बाबर नामा)
गुलबदन बेगम	हुमायूंनामा
अब्बास खान	तारीखे शेरशाही
अबुल फजल	अकबर नामा, आइने अकबरी
मलिक मोहम्मद जायसी	पदमावत्
सूरदास	सूरसारावली
तुलसीदास	रामचरितमानस्

मुगलकाल में वर्तमान में प्रचलित भाषाओं में से कई भाषाओं का विकास हुआ। कबीर, जायसी, सूरदास, तुलसीदास आदि की रचनाओं का हिन्दी में विशेष महत्व है। मीरा ने राजस्थानी व मैथली शब्दों का प्रयोग किया। बंगाल में रामायण और महाभारत का संस्कृत से बंगाली भाषा में अनुवाद किया गया। महाराष्ट्र में नामदेव तथा एकनाथ मराठी के प्रसिद्ध संत और साहित्यकार हुए। मुगलकाल में शासक साहित्य प्रेमी थे। सभी ने विद्धानों को संरक्षण प्रदान किया था। इस काल में फारसी तथा तुर्की भाषा में रचनाएँ लिखी गई।

उर्दू साहित्य के इतिहास का विकास मुगल काल में सर्वाधिक रहा यद्यपि उर्दू का जन्म सल्तनत काल में हुआ था। प्रारंभ में उर्दू को 'जबान-ए-हिन्दवी' कहा जाता था। अकबर ने संस्कृत भाषा के अनेक ग्रन्थों का अनुवाद फारसी भाषा में करवाया था।

चित्रकला

सल्तनत काल में चित्रकला का पतन हुआ। सुल्तानों ने चित्रकला को हेय दृष्टि से देखा। फिर भी गुजरात, राजस्थान, मालवा के क्षेत्रों में चित्रकला जीवित रही। यहाँ धार्मिक, जनजीवन से सम्बंधित चित्र प्रस्तुत किये। धीरे-धीरे मालवा और राजस्थानी चित्रकला शैलियों का विकास हुआ। गुजरात में जैन मुनियों द्वारा ताड़पत्र पर लिखे हुए ग्रन्थों में उच्चकोटि के छोटे-छोटे चित्र बनाये गये। बंगाल और बिहार में भी बौद्ध विद्धानों द्वारा लिखे पाण्डुलिपियों में छोटी-छोटी आकृतियाँ रेखाओं से चित्रित की जाती है। दक्षिण भारत में भी मंदिरों की दीवारों पर जो चित्र बनाये गये है उनमें भी रेखाओं का उपयोग दिखाई देता है।

मुगल चित्रकला की स्थापना हुमायूँ के शासनकाल से हुई। अकबर ने मुगल चित्रकला को सुव्यवस्थित रूप दिया। चित्रकारों के लिए एक अलग

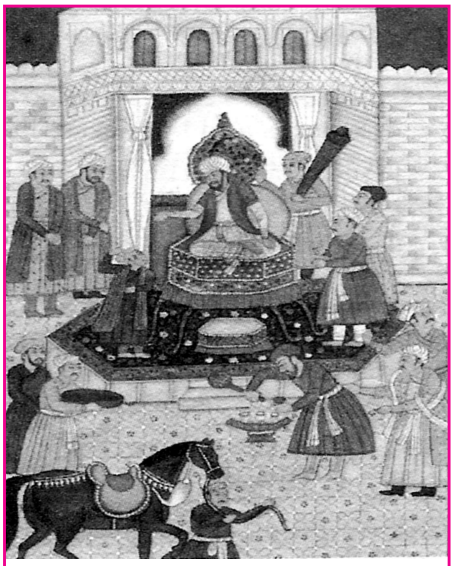

मुगलकालीन चित्रकला

विभाग भी स्थापित किया गया एवं उसने प्रसिद्ध चित्रकार रखे गये। मुगल चित्रकला शैली में चित्रित सबसे प्रारंभिक मुगलकालीन चित्र संग्रह 'हम्जनामा' है। जो दास्ताने अमीर हमजा के नाम से चर्चित है इन चित्रों की विशेषता है- विदेशी पेड़-पौधों और उनके फूल-पत्तों, स्थापत्य अलंकरण की बारीकियां साज सामान के साथ स्त्री आकृतियां, अलंकारिक तत्वों के रूप में विशिष्ट राजस्थानी चित्रकला। **रज्मनामा,** रामायण एवं अकबरनामा इस समय की चित्रित पाण्डुलिपियां हैं। अकबर के काल में पहलीबार भित्ती चित्रकारी प्रारम्भ हुई थी।

जहाँगीर का शासन काल मुगल चित्रकला का स्वर्णयुग कहा जाता है। जहाँगीर स्वयं भी एक चित्रकार था। जहाँगीर ने प्रसिद्ध चित्रकार आगारिजा के नेतृत्व में आगरा में एक चित्रशाला की स्थापना की। जहाँगीर के काल में छवि चित्र (व्यक्तिगत चित्र) प्राकृतिक दृश्यों एवं व्यक्तियों के जीवन से संबंधित चित्रण की पद्धति आरम्भ हुई। जहाँगीर ने सवोत्कृष्ठ चित्रकारों को उपाधियां भी प्रदान की जिसमें प्रसिद्ध पक्षी विशेषज्ञ चित्रकार उस्ताद मंसूर एवं व्यक्ति चित्र विशेषज्ञ अबुल हसन मुख्य हैं।

शाहजहाँ के शासनकाल में चित्रों में रेखांकन और बार्डर बनाने में विशेष प्रगति हुई। औरंगजेब ने अपने शासनकाल में चित्रकला को इस्लाम के विरूद्ध मानते हुए बन्द करा दिया, इसलिये दरबारी चित्रकला समाप्त हो गई और चित्रकार अन्य स्थानों पर जा कर बस गए। इस प्रकार क्षेत्रीय चित्रकला शैलियों का विकास हुआ।

वास्तुकला

भारत में मध्यकालीन वास्तुशिल्प पर इस्लामी प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। विभिन्न सुल्तानों व मुगलों के समय बनी इन इमारतों में भारतीय वास्तु कला का समन्वय ईरानी, तुर्की व अन्य इस्लामी देशों में प्रचलित वास्तुरूपों एवं शैलियों के साथ स्थापित हुआ। इस्लामी वास्तुकला में प्रमुखत: मस्जिद मकबरे, महल तोरण, गुम्बद, मेहराब तथा मीनारों का निर्माण किया गया।

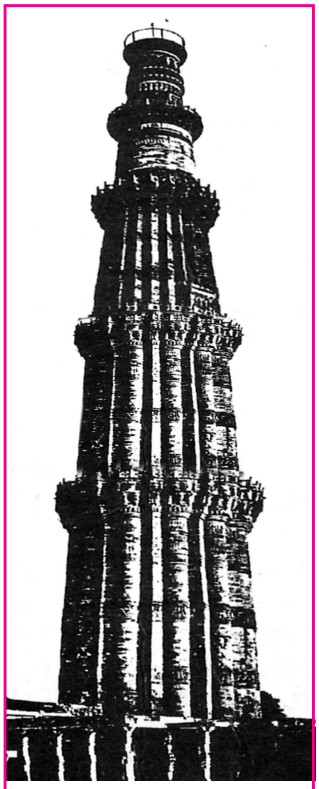
कुतुबमीनार

मेहरौली (दिल्ली) की कुब्बतुल इस्लाम मस्जिद 1139 ई. में निर्मित हुई और इसे भारत की प्रथम मस्जिद के रूप में पहचाना जाता है। सल्तनत काल में कुतुबमीनार का निर्माण कराया गया। 238 फुट ऊँचाई के साथ चौड़ाई में संकरी होती हुई इस मीनार में अलग-अलग ऊँचाईयों पर बाहर खुली हुई दीर्घाएँ है, जो इसको विशिष्टता प्रदान करता है। इस काल की मस्जिदों में चारों और मीनारें बनाई जाती थी।

मुगलकालीन स्थापत्य कला के पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध है। वास्तुकला के इतिहास में इस काल में एक नवीन युग का प्रादुर्भाव हुआ। इस नवीन वस्तुशैली को विद्वानों ने मुगल वास्तुशैली का नाम दिया। मुगल शैली का विकास विदेशी तथा भारतीय शैलियों के समन्वय से हुआ। अर्थात् मुगल कालीन वास्तुकला पर हिन्दु मुस्लिम जैन, बौद्ध, राजपूत, ईरानी, अरबी, बगदादी शैलियों का मिश्रित प्रभाव दिखाई देता है। मुगल स्थापत्य कला में संगमरमर के पत्थरों पर हीरे जवाहरतों से की गई जड़ावट पित्रा दुरा एवं महलों में बहते पानी की व्यवस्था मुगल स्थापत्य की प्रमुख विशेषता है। इस समय काबुली बाग मस्जिद, पानीपत, अयोध्या की बाबरी मस्जिद, आगरा किले की मस्जिद आदि प्रमुख स्थापत्य कार्य किये गये।

हुमायुँ के समय में वास्तुकला के क्षेत्र में कोई अधिक प्रगति नहीं हुई। उसके समय हिसार के फिरोजाबाद में दो मस्जिदों का निर्माण कार्य कराया गया। शेरशाह ने वास्तुकला के प्रति रूचि दिखाई। शेरशाह की सर्वाधिक महत्वपूर्ण

स्थापत्य कृति बिहार के सासाराम नामक स्थान पर झील के बीच में ऊँचे चबूतरे पर निर्मित मकबरा है। इसमें भारतीय व इस्लाम स्थापत्य कला का सुन्दर मिश्रण दृष्टिगोचर होता है। अकबर के काल में फारसी शैली का हिन्दू एवं बौद्ध स्थापत्य शैलियों के साथ समन्वय हुआ। अकबरकालीन भवन, लाल बलुआ पत्थरों से निर्मित हुए। अकबर ने फतहपुर सीकरी का निर्माण कराया। इनकी मुख्य विशेषता चापाकार एवं धरणिक शैलियों का समन्वय है। फतहपुर सीकरी का दीवाने आम, दीवाने खास, आगरे का किला, जोधाबाई का महल, पंचमहल, जामा मस्जिद, बुलंद दरवाजा अकबर कालीन स्थापत्य कला के नमूने हैं। जहाँगीर द्वारा अकबर का मकबरा, एतमाउदौला का मकबरा बनवाया गया। ग्वालियर स्थित राजा मानसिंह का महल और जयपुर के जयसिंह का महल स्थापत्य के बेजोड़ नमूने हैं।

शाहजहाँ के काल को मुगल स्थापत्य कला का स्वर्ण युग कहा जाता है। इस काल की प्रमुख स्थापत्य विशेषताएं थी- नक्काशीयुक्त मेहराबें, बंगाली शैली में मुड़े हुए कंगूरे तथा जंगले के खम्भे। शाहजहाँ काल की प्रसिद्ध इमारतों में दिल्ली का लाल किला, दिवाने खास और जामा मस्जिद एवं आगरे का ताजमहल प्रमुख है। ताजमहल शाहजहाँ कालीन वास्तुकला का चर्मोत्कर्ष है। ताजमहल 313 फुट ऊँचा चौकोर संगमरमर का मकबरा है जो 22 फुट ऊँचे चबूतरे पर बना है। इस चबूतरे के चार कोनों पर एक-एक मीनारें है। यह दो मंजिला है। इसके शीर्ष भाग पर एक गुम्बद है।

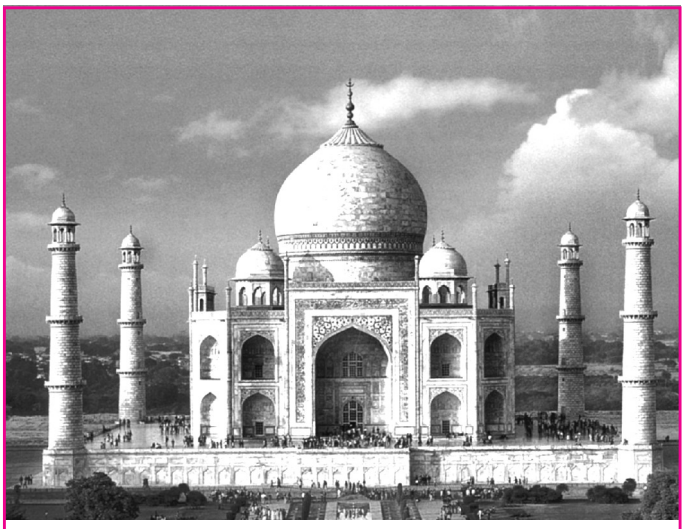

ताजमहल

गुरूद्वारों में अमृतसर का हरिमंदिर साहिब तत्कालीन समय की अनुपम कृति है। इसका निर्माण 1588 से 1601 ई. के बीच किया गया। शाहजहाँ के बाद मुगलकालीन वास्तुशिल्प का पतन होने लगा।

मूर्तिकला

मध्यकाल में दक्षिण भारत में मूर्तिकला का अद्‌भुत विकास हुआ। मंदिरों के बाह्य व अंतरंग भागों को अलंकृत करने के लिए तक्षण शिल्प व मूर्तिशिल्प का उपयोग किया गया। इस्लाम धर्म मूर्ति पूजा में विश्वास नहीं करता था ऐसे में मध्यकालीन मूर्तिकला पर उसका प्रभाव पड़ा। अकबर के समय मूर्ति निर्माण की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। जहांगीर के समय में भी मूर्तिकला को प्रोत्साहित किया गया। आगरा के किले में झरोखा दर्शन के नीचे अमरसिंह व कर्ण सिंह की मूर्तियां लगाई गई। फतहपुर सीकरी में महल के हाथी पौर द्वार पर पत्थर के दो विशाल हाथी सजाये गये हैं। लेकिन औरंगजेब के समय मूर्तिकला के विकास में उदासीनता आ गई। कुल मिलाकर मध्यकाल में मूर्तिकला को प्रोत्साहन नहीं मिला जिसके चलते मूर्तिकला प्रभावित हुई।

नृत्य संगीत

नृत्य संगीत की प्राचीन परम्परा मध्यकाल में भी बनी रही। नृत्य-संगीत से संबंधित कुछ ग्रंथ लिपिबद्ध हो चुके थे, इनमें भोज, सोमेश्वर और सारंगदेव का **संगीत रत्नाकर** बहुत प्रसिद्ध ग्रंथ है। बाद के समय में संगीत के कई अन्य ग्रन्थ भी रचे गये। तेरहवीं सदी में जयदेव द्वारा रचित 'गीत गोविन्द' इसी दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम कहा जा सकता है। मध्यकाल

में भक्ति संगीत को अधिक महत्व प्राप्त हुआ। मीराबाई, तुलसीदास, कबीरदास और सूरदास के भजनों को लोग मन लगाकर गाते थे।

सल्तनतकाल में नवीन रागों एवं वाद्य यंत्रों से हिन्दुस्तानी संगीत का परिचय हुआ। समय-समय पर सुल्तानों, सामंतों आदि ने इसे प्रोत्साहित किया। इस समय के प्रसिद्ध संगीतकार अमीर खुसरो था जिसने संगीत का वर्णन अपनी पुस्तक नूरह सिपहर (नव आकाश) में किया। इस पुस्तक में वर्णित है कि 'भारतीय संगीत से हृदय और आत्मा उद्वेलित हो जाते है। भारतीय संगीत केवल मनुष्य मात्र को ही प्रभावित नहीं करता, यह पशुओं तक को मंत्र मुग्ध कर देता है। हिरन संगीत से अवाक् खड़े रह जाते हैं और उनका आसानी से शिकार कर लिया जाता है'। अमीर खुसरो ने भारतीय ईरानी संगीत सिद्धांतों के मिश्रण से कुछ नवीन रागों का अविष्कार किया। कव्वाली का जनक अमीर खुसरो था। तत्कालीन समय में ख्याल तराना आदि जैसी संगीत की नई विधाओं के कारण संगीत के रूप में परिवर्तन आया। संगीत मनोरंजन का प्रमुख साधन था।

मुगलकाल में भी नृत्य संगीत कला फली-फूली। बाबर स्वयं संगीत प्रेमी था। तुजुक-बाबरी में संगीत गोष्ठियों के संदर्भ में वर्णन मिलता है। हुमायूँ व शेरशाह सूरी को भी संगीत का शौक था। मुगल सम्राट अकबर ने संगीतज्ञों को प्रश्रय दिया। वह स्वयं नक्कारा बजाने में प्रवीण था। संगीत शास्त्र में भी उसकी रूचि थी। अकबर के दरबार में नवरत्नों में से एक तानसेन उस युग का सर्वश्रेष्ठ संगीतज्ञ था। अबुल-फज़ल ने तानसेन के बारे में लिखा है कि उस जैसा एक भी गायक हजारों वर्षों से नहीं हुआ है। तानसेन की शिक्षा ग्वालियर में हुई। वृन्दावन के बाबा हरीदास तानसेन के गुरू थे। तानसेन के अलावा 36 गायकों को अकबर के दरबार में संरक्षण प्राप्त था। जिसमें बाजबहादुर, बैजबख्श, गोपाल, हरीदास, रामदास, सुजानखां, मियांलाल, बैजूवाबरा आदि प्रमुख थे। तत्कालीन समय में संगीत के संस्कृत ग्रंथों का फारसी में अनुवाद किया गया। अकबर के समय में ध्रुपद गायन की चार शैलियां प्रचलित थी। कालांतर में ध्रुपद का स्थान ख्याल गायन शैली ने ले लिया। मुगलकाल में जहाँगीर के समय में खुर्रम दाद, मक्खू, चतुरखाँ और हमजा आदि संगीतज्ञ थे। इसी तरह शाहजहाँ के समय भी रामदास, जगन्नाथ, सुखसैन और लाल खाँ आदि प्रमुख संगीतज्ञ थे। औरंगजेब संगीत कला का विरोधी था अत: मुगलकालीन संगीत कला का वैभव शाहजहाँ के बाद पतनोन्मुख हुआ।

भारतीय नृत्य की शास्त्रीय शैलियां मध्यकाल में भी दिखाई देती रहीं। इनमें भरतनाटयम्, कुचीपुड़ी, कत्थकली आदि शास्त्रीय शैलियों के नृत्य दक्षिण भारतीय क्षेत्रों में प्रचलित रहे। भरतनाटयम् व कुचीपुड़ी नृत्य कृष्णलीला पर आधारित होते थे। यह केवल दक्षिणी ब्राह्मण परिवारों तक ही सीमित था। जबकि कत्थक प्रारम्भ में उत्तरप्रदेश, राजस्थान, पंजाब व मध्यप्रदेश तक सीमित था। इनमें कृष्णलीलाओं अन्य पौराणिक कथाओं पर आधारित नृत्य किये जाते थे। दरबारों में नृत्य संगीत चलता था।

अन्य ललित कलाएँ

मध्यकाल में कलात्मक अभिव्यक्ति जारी रही। वृन्दावन, मथुरा में रासलीलाओं का मंचन किया जाता था। इस समय महाकाव्यों के अतिरिक्त ऐतिहासिक पात्रों पर भी नाटिकाओं का मंचन किया जाता था। विजयनगर के शासक हरिहर द्वितीय के पुत्र वीरूपाक्ष ने 'नारायण विलास' नाटक की रचना की साथ ही उन्मत्तराघव एकांकी लिखा। बाणभट्ट ने 'हर्षचरित्र', गोस्वामी ने 'विद्ग्धमाधव', 'ललितमाधव' व 'दानकेलिचन्द्रिका' की रचना की। इसी क्रम में रामचन्द्र ने 'जगन्नाथवल्लभ' नाटक लिखा। नाटकों के मंचन में सामाजिक व धार्मिक नाटकों को प्राथमिकता दी जाती थी। तत्कालीन समय में सुलेख-कला का विकास भी हुआ। इसके अतिरिक्त अलंकृत बर्तन, अलंकृत दिवारें, महल, मीनार मकबरे आदि पर नक्काशीदार जालियाँ, जरी के वस्त्र, कशिदाकारी, पच्चीकारी कला, नक्काशीदार फव्वारे, कामवाले कालीन आदि तत्कालीन ललित कलाओं पर प्रकाश डालते हैं।

अरण्यक : वनों में पढ़े जाने वाले।

ब्राहम्ण : वेदों पर आधारित वैदिक मंत्रों की व्याख्या।

उपनिषद् : वह विद्या जो आत्मज्ञान करा देती है।

श्रोतसूत्र : इसका विषय यज्ञ है।

गृहसूत्र : इसका विषय गृहस्थ जीवन है।

धर्मसूत्र : गृहसूत्र और धर्मसूत्र के विषय शामिल है।

पित्रा-दुरा : फूलों वाली आकृतियों में कीमती पत्थरों एवं बहुमूल्य रत्नों की जड़ावट।

मृणमूर्तियां : मिट्टी की मूर्तियां।

आख्यान : कहानियों को गाकर सुनाना।

अभ्यास

सही विकल्प चुनिए -

1. रथ-चालक कांस्य प्रतिमा कहाँ से प्राप्त है -
   (i) दैमाबाद (ii) मोहनजोदड़ो
   (ii) कालीबंगा (iv) पंजाब
2. प्रथम नगरीकरण कब शुरु हुआ -
   (i) नवपाषाण काल में (ii) सिन्धु सभ्यता में
   (ii) मौर्य काल में (iv) गुप्तकाल में
3. चित्रकला में वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन-अध्यापन की बात गुप्तकाल में किसने कही -
   (i) वात्सायन ने (ii) अशोक ने
   (ii) समुद्रगुप्त ने (iv) कुमारगुप्त ने
4. वीणाधारी सिक्कों का चलन किस राजवंश ने किया -
   (i) मौर्य राजवंश (ii) गुप्त राजवंश
   (ii) वर्धनवंश (iv) राजपूत वंश
5. कव्वाली का जनक था -
   (i) अकबर (ii) शाहजहाँ
   (ii) तानसेन (iv) अमीर खुसरो

सही जोड़ियाँ बनाइए-

1.	विद्वान उदयदेव	1.	खजुराहों का मंदिर
2.	चंदेल राजा	2.	माउण्ट आबू
3.	दिलवाड़ा मन्दिर	3.	मोहन जोदड़ो व हड़प्पा
4.	सिन्धु घाटी	4.	जैनेन्द्र व्याकरण

5.	महेन्द्र वर्मन प्रथम	5.	गुप्तकाल
6.	उदयगिरि गुफा	6.	मतविलास प्रहसन

अति लघुत्तरीय प्रश्न –

1. सिन्धु सभ्यता के सबसे लम्बे अभिलेख में कितने अक्षर हैं?
2. दीपवंश, महावंश, दिव्यावदान किस साहित्य से संबंधित है?
3. कल्प सूत्र और परिशिष्ट पर्व किस धर्म की साहित्यिक कृति है?
4. तुलसीदास, सूरदास, मीराबाई, रसखान किसके उपासक थे?
5. एलोरा के मंदिरों का निर्माण किस काल में हुआ?
6. ताजमहल किसने बनवाया था?
7. तानसेन कौन थे?

लघुत्तरीय प्रश्न –

1. गुप्तकालीन चित्रकला की विशेषताएँ लिखिए।
2. सिन्धु सभ्यता के वास्तुशिल्प की विशेषताएँ लिखिए।
3. अशोक के स्तम्भों पर टिप्पणी लिखिए।
4. गुप्तकालीन मंदिरों की विशेषताएँ बताइए।
5. नागर शैली व द्रविड़ शैली के मंदिरों में क्या अंतर है, लिखिए।
6. मथुरा व गांधार कला में अंतर स्पष्ट कीजिए।
7. मध्यकालीन चित्रकला की विशेषताएँ बताइए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न –

1. भारत की प्रमुख सांस्कृतिक प्रवृत्तियां कौन सी है किसी एक का प्राचीनकाल एवं मध्यकाल के संदर्भ में तुलनात्मक विवरण लिखिए।
2. प्राचीनकाल से लेकर मध्यकाल तक का साहित्य का विकास किस प्रकार हुआ लिखिए।
3. प्राचीनकाल से लेकर मध्यकाल तक की चित्रकला की विशेषताएँ लिखिए।
4. मुगलकालीन स्थापत्य कला का वर्णन कीजिए।
5. मध्यकाल में मूर्तिकला का विकास किस प्रकार हुआ लिखिए।
6. मध्यकाल में नृत्य व संगीत के विकास व उसके प्रभाव का समीक्षात्मक विवरण दीजिए।
7. ललित कलाओं का विकास प्राचीनकाल से मध्यकाल तक किस प्रकार हुआ लिखिए।

प्रायोजना कार्य

- नागर शैली व द्रविड़ शैली के मंदिरों के चित्रों को एकत्रित करके दोनों शैली के अंतरों को लिखिए।
- गांधार शैली व मथुरा शैली की बुद्ध प्रतिमाओं के चित्र एकत्रित कर उनके अंतरो को लिखिए।
- शिक्षक, विद्यार्थियों को समूह में कार्य आवंटित करके प्राचीन काल से मुगलकाल तक के साहित्य, चित्रकला, वास्तुकला, मूर्तिकला, नृत्य संगीत व ललित कलाओं से संबंधित जानकारी एकत्रित कराकर उन्हें ऐतिहासिक कालक्रम अनुसार व्यवस्थित कराते हुए स्क्रेप बुक तैयार करवाएँ, जो उपरोक्त में से किसी भी एक सांस्कृतिक प्रवृत्ति के क्रमबद्ध स्वरूप को दर्शाते हुए हो सकती है।